अलङ्कारसौरभम्

छात्रों के पाठ्यक्रम में आचार्य विश्वनाथ द्वारा विरचित साहित्यदर्पण के दशम परिच्छेद में वर्णित अलङ्कार–उनके लक्षण एवं उदाहरण हैं। उनकी सुविधा के लिए वहाँ वर्णित अलङ्कारों का यहाँ सरल भाषा में विवेचन किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त अभिज्ञान० के उदाहरणों द्वारा अलङ्कारों को और अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। परीक्षा की दृष्टि से बिना किसी भूमिका के यहाँ अलङ्कारों का विवेचन प्रस्तुत है। छात्र केवल यह ध्यान रखें कि सामान्यत: अलङ्कार तीन प्रकार के होते हैं–शब्दालङ्कार, अर्थालङ्कार तथा उभयालङ्कार। जहाँ शब्द को बदलने से अलङ्कार नष्ट हो जाए अर्थात् अलङ्कारत्व शब्द पर निर्भर करे वहाँ **शब्दालङ्कार** तथा जहाँ अलङ्कार अर्थ पर निर्भर करे वहाँ **अर्थालङ्कार** होता है।

जहाँ एक ही श्लोक में एक से अधिक अलङ्कार हों वहाँ संकर या संसृष्टि नामक अलङ्कार होता है किन्तु अनावश्यक विस्तार के भय से इन अलंकारों को यहाँ सम्मिलित नहीं किया गया।

मुख्य अलङ्कार : उनकी परिभाषा एवं उदाहरण

शब्दालङ्कार :

1. पुनरुक्तवदाभासः

लक्षण :– आपाततो यदर्थस्य पौनरुक्त्ये भासनम्।
पुनरुक्तवदाभासः स भिन्नाकारशब्दगः।।

(सा०द० X-2)

अर्थात् सरसरी नजर से देखने पर जहाँ अर्थ की आवृत्ति प्रतीत होती है

वहाँ '**पुनरुक्तवदाभास**' अलङ्कार होता है। इसमें शब्द भिन्न आकार अथवा स्वरूप वाले होते हैं।

उदाहरण :

भुजङ्गकुण्डली व्यक्तशशिशुभ्रांशुशीतगुः।
जगन्त्यपि सदापायादव्याच्चेतोहरः शिवः।।

(सा०द० X-2 में)

अर्थात् कानों में कुण्डलरूप सर्पों को धारण करने वाले श्वेत किरणों वाले चन्द्रमा से युक्त चित्त को आकर्षित करने वाले भगवान् शङ्कर इस संसार की सदा विघ्नों से रक्षा करें।

प्रस्तुत श्लोक में 'भुजङ्ग कुण्डली' दोनों शब्द 'सर्प' अर्थ को प्रकट कर रहे हैं और सरसरी नजर से यहाँ अर्थ की पुनरुक्ति प्रतीत होती है किन्तु अर्थ विचारने पर 'कुण्डली' शब्द 'कुण्डल वाला' अर्थ को अभिव्यक्त करता है तथा पुनरुक्ति दोष नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार 'शशि शुभ्रांशु शीतगुः' तथा 'हरः शिवः' शब्दों में भी सरसरी दृष्टि से अर्थ की पुनरुक्ति लगती है किन्तु अर्थ विचारने पर पुनरुक्ति दोष नष्ट हो जाता है। इस प्रकार यहाँ 'पुनरुक्तवदाभास' अलङ्कार है।

2. अनुप्रासः

लक्षण :–अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्।

(सा०द० X-3)

अर्थात् स्वर में विषमता रहने पर भी शब्द की समानता को '**अनुप्रास**' कहते हैं।

इसके पाँच भेद हैं–छेकानुप्रास, वृत्त्यनुप्रास, श्रुत्यनुप्रास, अन्त्यानुप्रास तथा लाटानुप्रास।

3. छेकानुप्रासः

लक्षण :–छेको व्यञ्जनसंघस्य सकृत्साम्यमनेकधा।

(सा०द० X-3)

अर्थात् व्यञ्जन-समूह के एक बार अनेक प्रकार से होने वाले साम्य को **छेकानुप्रास** कहते हैं। अनेक प्रकार से तात्पर्य है-स्वरूप तथा क्रम से।

उदाहरण :

आदाय बकुलगन्धानन्धीकुर्वन् पदे पदे भ्रमरान्।
अयमेति मन्दमन्दं कावेरीवारिपावनः पवनः।।

(सा०द० X-3 में)

प्रस्तुत श्लोक में 'गन्धानन्धी' में 'न' और 'ध' की; 'कावेरीवारि' में 'व' और 'र' की तथा 'पावनः पवनः' में 'प', 'व' और 'न' अनेक व्यञ्जनों की एक बार आवृत्ति (समानता) हुई है; अतः यहाँ **छेकानुप्रास** अलङ्कार है।

4. वृत्यनुप्रासः

लक्षण :- अनेकस्यैकधा साम्यमसकृद् वाप्यनेकधा।
एकस्य सकृदप्येष वृत्त्यनुप्रास उच्यते।।

(सा०द० X-4)

अर्थात् वृत्त्यनुप्रास वह शब्दालङ्कार है जिसमें अनेक व्यंजनों की एक प्रकार से (केवल स्वरूप से, क्रम से नहीं) समानता हो; अथवा अनेक व्यंजनों की अनेक बार (स्वरूप तथा क्रम से) समानता हो; अथवा जहाँ एक वर्ण की एक बार अथवा अनेक बार समानता हो।

उदाहरण :

उन्मीलन्मधुगन्धलुब्धमधुव्याधूतचूताङ्कुर-
क्रीडत्कोकिलकाकलीकलकलैरुदगीर्णकर्णज्वराः।
नीयन्ते पथिकैः कथं कथमपि ध्यानावधानक्षण-
प्राप्तप्राणसमासमागमरसोल्लासैरमी वासराः।।

(सा०द० X-4 में)

प्रस्तुत श्लोक के चौथे चरण में 'रसोल्लासैरमी' शब्द में 'र' और 'स' वर्णों की एक ही प्रकार से समानता है (केवल स्वरूप से, क्रम से नहीं); दूसरे चरण में 'क' तथा 'ल' वर्णों की अनेक बार उसी क्रम से आवृत्ति हुई है तथा

पहले चरण में 'उन्मीलन्मधुगन्धलुब्ध...' में 'म' वर्ण की एक बार तथा 'ध' वर्ण की अनेक बार आवृत्ति हुई है, अतः यह श्लोक **वृत्त्यनुप्रास** शब्दालङ्कार का उदाहरण है।

अन्य उदाहरण :

मुक्तेषु रश्मिषु निरायतपूर्वकाया
निष्कम्पचामरशिखा निभृतोर्ध्वकर्णाः।
आत्मोद्धतैरपि रजोभिरलङ्घनीया
धावन्त्यमी मृगजवाक्षमयेव रथ्याः।।

(अभिज्ञान० I-8)

अभिज्ञान० के इस श्लोक में 'ष' की एक ही प्रकार से एक बार तथा 'न' की अनेक बार आवृत्ति होने से यह श्लोक **वृत्त्यनुप्रास** अलङ्कार का उदाहरण है।

5. श्रुत्यनुप्रासः

लक्षण :– **उच्चार्यत्वाद्यदेकत्र स्थाने तालुरदादिके।**
सादृश्यं व्यञ्जनस्यैव श्रुत्यनुप्रास उच्यते।।

(सा०द० X-5)

अर्थात् श्रुत्यनुप्रास अलङ्कार में तालु, कण्ठ, मूर्धा, दन्त आदि किसी एक उच्चारण स्थान में उच्चरित व्यञ्जनों की समानता होती है।

उदाहरण :

दृशा दग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैव याः।
विरूपाक्षस्य जयिनीस्ताः स्तुमो वामलोचनाः।।

(सा०द० X-5 में)

प्रस्तुत श्लोक में जीवयन्ति, याः और जयिनीः में 'तालु' से उच्चरित होने वाले 'ज' और 'य' वर्णों की समानता है; अतः यह श्लोक श्रुत्यनुप्रास अलङ्कार का उदाहरण है। इसी प्रकार उच्चारण स्थान दन्त, कण्ठ आदि वर्णों की समानता वाले उदाहरण भी प्राप्त होते हैं।

अन्य उदाहरण :

कृष्णसारे ददच्चक्षुस्त्वयि चाधिज्यकार्मुके।
मृगानुसारिणं साक्षात् पश्यामीव पिनाकिनम्।।

(अभिज्ञान० I-6)

अभिज्ञान० के इस श्लोक में 'त्वयि' तथा 'चाधिज्यकार्मुके, पदों में 'य' और 'च' एक ही उच्चारणस्थान 'तालु' से उच्चरित होने वाले वर्णों की समता है; अतः यह श्लोक '**श्रुत्यनुप्रास**' अलङ्कार का उदाहरण है।

6. अन्त्यानुप्रासः

लक्षण :– व्यञ्जनं चेद्यथावस्थं सहाद्येन स्वरेण तु।
आवर्त्यतेऽन्त्ययोज्यत्वादन्त्यानुप्रास एव तत्।।

(सा०द० X-6)

अर्थात् अन्त्यानुप्रास अलङ्कार में प्रथम स्वर के साथ यथावस्थ व्यञ्जन की ऐसी आवृत्ति होती है जो पद अथवा पाद के अन्त में ही होती है।

उदाहरण :

केशः काशस्तबकविकासः कायः प्रकटितकरभविलासः।
चक्षुर्दग्धवराटककल्पं त्यजति न चेतः काममनल्पम्।।

(सा०द० X-6 में)

प्रस्तुत श्लोक के प्रथम एवं द्वितीय चरणों के अन्त में 'विकास' तथा 'विलास' शब्दों में 'आस' (व्यञ्जन युक्त स्वर) की आवृत्ति हुई है तथा तृतीय एवं चतुर्थ चरणों के अन्त में 'कल्पम्' तथा 'नल्पम्' शब्दों में 'अल्पम्' की आवृत्ति हुई है; अतः यह श्लोक **पादान्तगत अन्त्यानुप्रास** का उदाहरण है।

इसके अतिरिक्त 'मन्दं हसन्तः पुलकं वहन्तः' सूक्ति में 'हसन्तः', 'वहन्तः' में तथा 'मन्दं', 'पुलकं' में पदान्तगत अन्त्यानुप्रास है।

7. लाटानुप्रासः

लक्षण :– शब्दार्थयोः पौनरुक्त्यं भेदे तात्पर्यमात्रतः।
लाटानुप्रास इत्युक्तो..............................।।

(सा०द० X-7)

अर्थात् केवल तात्पर्य में भिन्न होने वाले शब्द तथा अर्थ की आवृत्ति को **लाटानुप्रास** अलङ्कार कहते हैं।

उदाहरण :

स्मेरराजीवनयने नयने किं निमीलिते।
पश्य निर्जितकन्दर्पं कन्दर्पवशगं प्रियम्।।

(सा०द० X-7 में)

प्रस्तुत श्लोक में 'नयने-नयने' में शब्द तथा अर्थ की आवृत्ति है किन्तु पहला 'नयने' पद सम्बोधन है तथा दूसरा 'नयने' पद द्वितीया विभक्ति में हैं, दोनों के तात्पर्य में भिन्नता होने से यहाँ **लाटानुप्रास** अलङ्कार है। इसी प्रकार कन्दर्पम्-कन्दर्प-दोनों के तात्पर्य में भिन्नता है।

अन्य उदाहरण :

इदमनन्यपरायणमन्यथा
हृदयसन्निहिते हृदयं मम।
यदि समर्थयसे मदिरेक्षणे
मदनबाणहतोऽस्मि हतः पुनः।।

(अभिज्ञान० III.16)

अभिज्ञान० के इस श्लोक में 'हृदयसन्निहिते' तथा 'हृदयम्' दोनों पदों में (हृदय के) शब्द तथा अर्थ दोनों की आवृत्ति हुई है किन्तु पहला शब्द 'सम्बोधन' रूप है तथा दूसरा 'कर्म' रूप है; दोनों पदों के तात्पर्य में भेद होने से यहाँ लाटानुप्रास शब्दालङ्कार है।

8. यमकम्

लक्षण :–सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।

(सा०द० X-8)

अर्थात् भिन्न अर्थ वाले सार्थक स्वर और व्यञ्जन के समूह की उसी क्रम से आवृत्ति को **यमक** कहते हैं।

उदाहरण :

नवपलाश-पलाशवनं पुरः स्फुटपराग-परागतपंकजम्।
मृदुलतान्त-लतान्तमलोकयत् स सुरभिं सुरभिं सुमनोभरैः।।

(सा०द० X-8 में)

अर्थः 'नवीन पलाशों (पत्तों) से युक्त पलाश (वृक्ष का नाम 'ढाक') वन वाले, बढ़े हुए पराग, (पुष्पों की धूलि) से परागत (युक्त) कमल वाले, मृदुल (कोमल) तथा तान्त (विस्तृत) लतान्त (लताओं के प्रान्त) वाले तथा पुष्पों की अधिकता से सुरभि (सुगन्धित) उस सुरभि (वसन्त ऋतु) को श्रीकृष्ण ने रैवतक पर्वत पर देखा।'

प्रस्तुत श्लोक में पलाश (पत्ते), पलाश (ढाक, वृक्ष विशेष का नाम) तथा सुरभि (वसन्त ऋतु) और सुरभि (सुगन्धित)–भिन्न-भिन्न अर्थ वाले पदों की उसी क्रम से आवृत्ति है–अतः यह श्लोक यमक अलङ्कार का उदाहरण है। यद्यपि यहाँ लतान्त तथा पराग पदों की भी आवृत्ति है किन्तु पहला 'लतान्त' पद तथा दूसरा 'पराग' पद निरर्थक है, अतः इन शब्दों में अलङ्कारत्व नहीं है।

अन्य उदाहरण :

"प्रजाः प्रजाः स्वा इव तन्त्रयित्वा
निषेवते श्रान्तमना विविक्तम्।
यूथानि संचार्य रविप्रतप्तः
शीतं दिवा स्थानमिव द्विपेन्द्रः।।"

(अभिज्ञान० V-5)

अभिज्ञान० के इस श्लोक में 'प्रजाः' (प्रजा) तथा 'प्रजाः' (सन्तान)- भिन्न अर्थ वाले सार्थक स्वर-व्यंजन-समूह की उसी क्रम से आवृत्ति है, अतः इस पद्य में यमक अलङ्कार है।

9. वक्रोक्ति

लक्षण :– अन्यस्यान्यार्थकं वाक्यमन्यथा योजयेद्यदि।
अन्यः श्लेषेण काक्वा वा सा वक्रोक्तिस्ततो द्विधा।।

(सा०द० X-9)

अर्थात् **वक्रोक्ति** वह शब्दालङ्कार है जहाँ काकु या श्लेष के कारण किसी व्यक्ति के अन्य अर्थ वाले वाक्य को किसी भिन्न अर्थ में ग्रहण कर लिया जाता है। वक्रोक्ति के दो भेद होते हैं **श्लेष वक्रोक्ति** (जहाँ शब्द दो अर्थ वाले होते हैं) तथा **काकु वक्रोक्ति** (कहने के तरीके से अर्थ में परिवर्तन आ जाना।

श्लेष वक्रोक्ति का उदाहरण :

के यूयं, स्थल एव संप्रति वयं प्रश्नो विशेषाश्रयः,
क्रिं ब्रूते विहगः, स वा फणिपतिर्यत्रास्ति सुप्तो हरिः।
वामा यूयमहो विडम्बरसिकः कीदृक्स्मरो वर्तते,
येनास्मासु विवेकशून्यमनसः पुंस्वेव योषिद्भ्रमः।।

(सा०द० X.9 में)

के यूयम् ?–वक्ता ने प्रश्न पूछा 'आप कौन है ?' श्रोता ने अर्थ लिया–क्या आप जल पर हैं? क्योंकि 'के' शब्द के 'जल पर' और 'कौन' दोनों अर्थ होते हैं। 'क' शब्द जलवाचक भी है और प्रश्नवाचक भी। श्रोता ने उत्तर दिया–'स्थल एव संप्रति वयम्' अर्थात् हम लोग अभी जमीन पर हैं जल पर नहीं। प्रश्नकर्ता पुनः कहता है–'प्रश्नो विशेषाश्रयः'–'हम तो आपकी विशेषता (परिचय नाम आदि) के बारे में जानना चाहते हैं।' श्रोता ने 'विशेष' पद का दूसरा अर्थ (वि+शेष) 'पक्षी' 'शेषनाग' ग्रहण किया और वही उत्तर दिया–'क्रिं ब्रूते विहगः'–'क्या कहते हो वह 'पक्षी'; 'स वा फणिपतिर्यत्रास्ति सुप्तो हरिः' अर्थात् जिनके ऊपर भगवान् विष्णु सोते हैं ?

हर बार भिन्न अर्थ ग्रहण करने से प्रश्नकर्ता ने थोड़ा दुःखी होकर कहा–'वामा यूयम्'–'आप तो टेढ़े हैं।' इस वाक्य का अर्थ श्रोता ने ग्रहण किया–'वामा' अर्थात् 'स्त्री'–'आप तो स्त्री हैं।' और साथ ही यह भी कहा प्रश्नकर्ता से–कैसा धूर्त है और कैसा कामयुक्त तथा विवेकशून्य है यह जिसे हम जैसे पुरुषों में भी स्त्री होने का भ्रम हो रहा है?

इस प्रकार भिन्न अर्थ वाले वक्ता के वाक्य को यहाँ श्रोता ने बिल्कुल भिन्न अर्थ में ग्रहण किया है, अतः यह श्लोक **श्लेषवक्रोक्ति** का सुन्दर उदाहरण है।

काकुवक्रोक्ति का उदाहरण :

काले कोकिलवाचाले सहकारमनोहरे।
कृतागसः परित्यागात्तस्याश्चेतो न दूयते।।

(सा०द० X-9 में)

अर्थात् "कोयल की मधुर कूक से युक्त तथा मञ्जरी से युक्त नए पत्तों वाले आमों के वृक्षों से आकर्षक प्रतीत होने वाले वसन्त के समय में अपराधी प्रेमी के परित्याग से उस नायिका का मन क्या दु:खी नहीं होता? (अवश्य दु:खी होता है)।

प्रस्तुत श्लोक में काकु (बोलने की विशेष विधा) के कारण 'न दूयते' 'दु:खी नहीं होता' का अर्थ 'दूयते एव' अर्थात् 'अवश्य दु:खी होता है'-यह लिया जाता है, अत: यहाँ **काकुवक्रोक्ति** अलङ्कार है।

10. श्लेष

लक्षण :- श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते।

(सा०द० X-11)

अर्थात् श्लिष्ट पदों द्वारा अनेक अर्थों का अभिधान होने पर **श्लेष अलङ्कार** होता है। जिन पदों में एक से अधिक अर्थ चिपके हों या जो एक से अधिक अर्थों की प्रतीति कराएँ उन्हें **श्लिष्ट** पद कहा जाता है।

श्लेष आठ प्रकार का होता है-वर्ण, प्रत्यय, लिंग, प्रकृति, पद, विभक्ति, वचन तथा भाषा। कुछ मुख्य भेदों के उदाहरण यहाँ दिए जा रहे हैं-

वर्णश्लेष का उदाहरण :

प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्रमपि।।

(सा०द० X-12 में)

अर्थ: 'विधि (दैव) अथवा विधु (चन्द्रमा) के विपरीत होने पर सब साधन निष्फल हो जाते हैं। गिरने के (अस्त होने के) समय सूर्य के हजार कर (किरण अथवा हाथ) भी सहारा न दे सके।'

प्रस्तुत श्लोक में 'विधौ' शब्द के दो अर्थ हैं–'भाग्य के' और 'चन्द्रमा के'। यह शब्द 'विधि' (भाग्य) और 'विधु' (चन्द्रमा) शब्द का सप्तमी विभक्ति का एकवचन का रूप है। एक ही शब्द के दो अर्थ होने से यहाँ **श्लेष अलङ्कार** है। अन्तिम वर्ण 'इ' और 'उ' के कारण यहाँ दो अर्थ प्राप्त होते हैं। अतः यहाँ वर्ण श्लेष है।

प्रत्यय श्लेष का उदाहरण :

किरणा हरिणाङ्कस्य दक्षिणश्च समीरणः।
कान्तोत्सङ्गजुषां नूनं सर्व एव सुधाकिरः।।

(सा०द० X-12 में)

अर्थ: 'चन्द्रमा की किरणें तथा दक्षिण से आने वाला मलयानिल–ये सब प्रियतमा के संग रहने वालों के लिए अमृत बरसाने वाले हैं।'

प्रस्तुत श्लोक में 'सुधाकिरः' शब्द 'क्विप्' और 'क' दोनों प्रत्ययों से निष्पन्न हो सकता है। इसके अतिरिक्त एकवचन और बहुवचन दोनों में यह रूप समान होता है, अतः यहाँ **प्रत्यय श्लेष** तथा **वचन श्लेष** दोनों अलङ्कार हैं। 'सुधाकिरः' के अर्थ हैं–'अमृत की वर्षा करने वाला' तथा 'अमृत की वर्षा करने वाले'।

लिङ्ग श्लेष का उदाहरण :

विकसन्नेत्रनीलाब्जे तथा तन्व्याः स्तनद्वयी।
तव दत्तां सदामोदं लसत्तरलहारिणी।।

(सा०द० X-12 में)

अर्थ: 'उस तन्वी के विलासयुक्त, चंचल तथा दोनों खिले हुए मनोहारी नेत्र रूपी कमल तथा सुशोभित चञ्चल मध्यमणि से युक्त मोतियों के हार वाले दोनों स्तन तुम्हें सदा आनन्द प्रदान करें।'

प्रस्तुत श्लोक में 'लसत्तरलहारिणी' शब्द नपुंसकलिङ्ग शब्द 'लसत्तरलहारिन्' का प्रथमा द्विवचन का रूप है और 'लसत्तरलहारिणी' स्त्रीलिंग शब्द का प्रथमा एकवचन का भी रूप है। एक ही शब्द दो विभिन्न लिङ्गों का अर्थ प्रकट कर रहा है। अतः यहाँ लिङ्गश्लेष है।

इसके अतिरिक्त 'दत्ताम्' शब्द 'दा' धातु से लोट् लकार आत्मनेपद प्रथम पुरुष एकवचन में तथा परस्मैपद लोट् लकार प्रथम पुरुष द्विवचन में यही रूप बनता है, इस प्रकार यहाँ **वचनश्लेष** भी है।

विभक्ति श्लेष का उदाहरण :

सर्वस्वं हर सर्वस्य त्वं भवच्छेदतत्परः।
नयोपकार-सामुख्यमायासि तनुवर्तनम्।।

(सा०द० X-12 में)

अर्थ:–इस श्लोक के दो अर्थ निकल सकते हैं–1. शिवजी की स्तुति के पक्ष में अर्थ होगा–'हे शिव (हर), तुम सबके सर्वस्व हो। तुम संसार (भव) के छेदन (विनाश) करने में तत्पर हो। तथा नय (न्याय) तथा उपकार का साम्मुख्य (साधन) करने वाली, शरीरवृत्ति को प्राप्त हो अर्थात् आपके सब व्यवहार परोपकार तथा न्याय पूर्ण होते हैं।'

2. **दूसरा अर्थ** :–एक डाकू शिव मन्दिर के पास खड़े हुए अपने पुत्र से कहता है–'हे पुत्र, तू सबका सर्वस्व लूट ले। तू सबके छेदन (मारकाट) में तत्पर हो। तू किसी पर उपकार मत कर तथा दूसरों को पीड़ा देने वाले व्यवहार का विस्तार कर।'

प्रस्तुत श्लोक में 'हर' पद शिवजी का संबोधन है तथा 'हृ' धातु, लोट् लकार मध्यमपुरुष एकवचन का भी यही रूप बनता है। इस प्रकार यहाँ सुबन्त तथा तिङन्त विभक्तियों का श्लेष है।

श्लेष का एक अन्य उदाहरण :

औत्सुक्यमात्रमवसाययति प्रतिष्ठा
क्लिश्नाति लब्धपरिपालनवृत्तिरेव।
नातिश्रमापनयनाय यथा श्रमाय
राज्यं स्वहस्तधृतदण्डमिवातपत्रम्।।

(अभिज्ञान० V-6)

प्रस्तुत श्लोक में '**प्रतिष्ठा**' पद के दो अर्थ हैं '**राज्यप्राप्ति**' तथा '**यश की प्राप्ति**'। इसी प्रकार '**दण्डम्**' पद के भी दो अर्थ हैं–'**राजकीय**

दण्ड-व्यवस्था' तथा 'छतरी का डंडा'। एक शब्द के दो अर्थ होने से यहाँ श्लेष अलङ्कार है।

अभिज्ञानशाकुन्तल में श्लेष अलङ्कार के अन्य उदाहरण हैं–II-4, 7, 14; III-17; IV-1 तथा VII-11.

11. अर्थालङ्कार–उपमा

लक्षण :–साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः।

(सा०द० X-14)

अर्थात् एक वाक्य में दो पदार्थों की वैधर्म्य रहित तथा स्पष्ट रूप से प्रतिपादित समानता को 'उपमा' कहते हैं।

उपमा के चार अंग होते हैं–उपमान, उपमेय, साधारण धर्म तथा उपमावाचक शब्द। अत्यन्त सरल शब्दों में ऐसा कहा जा सकता है कि–जिस पदार्थ की किसी अन्य वस्तु से तुलना की जाए वह **उपमेय** कहलाता है। जिस पदार्थ के साथ किसी वस्तु की तुलना की जाए वह **उपमान** कहलाता है।

उपमान तथा उपमेय में जो धर्म (गुण, क्रिया, स्वभाव आदि) समान रूप से मिलता है उसे **साधारण धर्म** कहते हैं तथा जिन शब्दों से उपमेय तथा उपमाान की समानता प्रकट होती हो वे शब्द **उपमावाचक** शब्द कहलाते हैं जैसे–इव, यथा, तुल्यम्, सदृशम् आदि।

उपमा के मुख्यतः दो भेद हैं पूर्णोपमा तथा लुप्तोपमा। जहाँ उपमा के अंग–उपमेय, उपमान, साधारण–धर्म तथा उपमावाची शब्द में से कोई एक, दो या तीन न हों तो **लुप्तोपमा** होती है तथा चारों अंगों के रहने पर वह '**पूर्णोपमा**' कहलाती है।

सा पूर्णा यदि सामान्यधर्म औपम्यवाचि च।
उपमेयं चोपमानं भवेद्वाच्यम्.............।।

(सा०द० X-15)

लुप्ता सामान्यधर्मादेरेकस्य यदि वा द्वयोः।
त्रयाणां वानुपादाने ....।।

(सा०द० X-17-18)

उदाहरण :

सौरभमम्भोरुहवन्मुखस्य कुम्भाविव स्तनौ पीनौ।
हृदयं मदयति वदनं तव शरदिन्दुर्यथा वाले।।

(सा०द० X-17 में)

अर्थ : 'तुम्हारे मुख की सुगन्ध कमल के जैसी है, तुम्हारे स्तन कुम्भ के समान पीन हैं, तुम्हारा मुख शरत्कालीन चन्द्रमा की तरह हृदय को मस्त करता है।'

प्रस्तुत श्लोक के प्रथम चरण में 'मुख' उपमेय; 'अम्भोरुह'-उपमान; सौरभ-उपमान तथा उपमेय दोनों में साधारण-धर्म है तथा 'वत्' उपमावाची शब्द है। इसी प्रकार द्वितीय चरण में 'स्तन'-उपमेय; 'कुम्भ'-उपमान; 'पीनत्व' साधारण-धर्म तथा 'इव' उपमावांची शब्द है। भिन्न-भिन्न पदार्थों की समानता यहाँ स्पष्ट रूप से वर्णित है। यह श्लोक उपमा के चारों अंग विद्यमान होने से 'पूर्णोपमा' का बहुत सुन्दर उदाहरण है।

उपमालङ्कार सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अलङ्कार है। इसे कविता का चूड़ामणि माना जाता है। एक और उदाहरण प्रस्तुत है-

मधुरः सुधावदधरः पल्लवतुल्योऽतिपेलवः पाणिः।
चकितमृगलोचनाभ्यां सदृशी चपले च लोचने तस्याः।।

(सा०द० X-17 में)

अर्थ : 'उस सुन्दरी का अधर सुधा के समान मधुर है, हाथ पल्लव के समान सुकुमार हैं तथा नेत्र चकित मृग के नेत्रों के समान चञ्चल हैं।'

प्रस्तुत श्लोक के प्रथम चरण में 'अधर' उपमेय; 'सुधा'-उपमान; 'माधुर्य'-साधारण धर्म तथा 'वत्' उपमावाची शब्द है। यहाँ भिन्न-भिन्न पदार्थों की समानता स्पष्ट रूप से वर्णित है तथा उपमा के चारों अंग विद्यमान हैं; अतः यह श्लोक पूर्णोपमा का बहुत सुन्दर उदाहरण है।

एक उदाहरण अभिज्ञान० से भी देख लें-

तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसभं हृतः।
एष राजेव दुष्यन्तः सारङ्गेणातिरंहसा।।

(अभिज्ञान० I-5)

प्रस्तुत श्लोक में राजा दुष्यन्त तथा मृग आदि भिन्न-भिन्न पदार्थों की तुलना स्पष्ट रूप से वर्णित है, अत: यहाँ '**उपमा**' अलङ्कार है। अभिज्ञान० में इसके अनेक अन्य उदाहरण प्राप्त होते हैं जैसे–I-11, 21, 34; II-4, 7, 17; III-7, 9, 24; IV-1, 4, 5, 7, 19; V-5, 19, 21, 30; VI-6, 9, 24; VII-11, 15, 16, 18, 32.

स्वप्न० में भी इसके कई उदाहरण प्राप्त होते हैं जैसे–I-1; IV-3; V-1, 13 तथा VI-4.

12. रसनोपमा

लक्षण : – .... कथिता रसनोपमा।
यथोर्ध्वमुपमेयस्य यदि स्यादुपमानता।।

(सा०द० X-25)

अर्थात् जहाँ उपमेय उत्तरोत्तर उपमान के रूप में परिणत होता दिखाई दे वहाँ '**रसनोपमा**' अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

चन्द्रायते शुक्लरुचापि हंसो हंसायते चारुगतेन कान्ता।
कान्तायते स्पर्शसुखेन वारि वारीयते स्वच्छतया विहायः।।

(सा०द० X-25 में)

अर्थ : 'शरद् ऋतु की महिमा से इस स्वच्छ सरोवर में यह हंस अपनी शुभ्र कान्ति से चन्द्रमा जैसा लग रहा है, यह सुन्दरी अपनी सुन्दर चाल से हंस की तरह चलती हुई दिखाई दे रही है, यह जल अपने आनन्ददायक स्पर्श से रमणी के जैसा आनन्द प्रदान कर रहा है तथा यह आकाश, अपनी निर्मलता से अपने को ऐसा दिखा रहा है जैसे निर्मल जल हो।'

प्रस्तुत श्लोक में पूर्ववर्णित उपमेय '**हंस**' अगले चरण में उपमान बन गया है, दूसरे चरण का उपमेय '**सुन्दरी**' तीसरे चरण में उपमान रूप में परिणत हो गया है, इस प्रकार यहाँ **रसनोपमा** अलङ्कार है।

13. मालोपमा

लक्षण :–मालोपमा यदेकस्योपमानं बहु दृश्यते।

(सा०द० X-26)

अर्थात् जहाँ एक उपमेय के अनेक उपमान हों वहाँ '**मालोपमा**' अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

वारिजेनेव सरसी शशिनेव निशीथिनी।
यौवनेनेव वनिता नयेन श्रीर्मनोहरा।।

(सा०द० X-26 में)

'राजनीति से राजलक्ष्मी इस प्रकार मनोरम लगा करती है जिस प्रकार कमल से सरसी, चन्द्रमा से रात्रि तथा यौवन से रमणी आकर्षक लगती है।'

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय राज्यश्री के तीन उपमान वर्णित हैं अतः यहाँ मालोपमा अलङ्कार है।

एक और उदाहरण :

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै-
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।

(अभिज्ञान०, II-10)

प्रस्तुत श्लोक में शकुन्तला के निष्कलङ्क सौन्दर्य (उपमेय) के न सूंघा हुआ पुष्प, नाखूनों से न कटा हुआ कोमल पत्ता, न बिंधा हुआ रत्न आदि अनेक उपमानों का वर्णन होने से मालोपमा अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के पांचवें अंक के ग्यारहवें (V-11) श्लोक में भी मालोपमा अलङ्कार है।

14. अनन्वय

लक्षण :–उपमानोपमेयत्वमेकस्यैव त्वनन्वयः।।

(सा०द० X-26)

अर्थात् जहाँ एक ही वस्तु की कल्पना उपमान तथा उपमेय दोनों रूपों में हो जाए वहाँ '**अनन्वय**' अलङ्कार होता है।

उदहारण :

राजीवमिव राजीवं जलं जलमिवाजनि।
चन्द्रश्चन्द्र इवातन्द्रः शरत्समुदयोद्यमे।।

(सा०द० X-26 में)

अर्थ : 'शरद् ऋतु के आरम्भ होने से कमल कमल जैसा, जल जल जैसा तथा चन्द्रमा चन्द्रमा जैसा निर्मल लगने लगा।'

प्रस्तुत श्लोक में राजीव (कमल) आदि वस्तुओं की उपमान और उपमेय दोनों रूपों में कल्पना होने से अनन्वय अलङ्कार है।

15. उपमेयोपमा

लक्षण :- पर्यायेण द्वयोरेतदुपमेयोपमा मता।

(सा०द० X-27)

अर्थात् जहाँ क्रम से दो वस्तुएँ परस्पर उपमान और उपमेय रूप में कल्पित दिखाई दें वहाँ उपमेयोपमा अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

कमलेव मतिर्मतिरिव कमला, तनुरिव विभा विभेव तनुः।
धरणीव धृतिः धृतिरिव धरणी, सततं विभाति बत यस्य।।

(सा०द० X-27 में)

अर्थ : 'आश्चर्य है! इन महाराज की बुद्धि लक्ष्मी जैसी, लक्ष्मी बुद्धि जैसी, कान्ति दिव्यदेह जैसी, दिव्य देह कान्ति जैसी, धृति पृथ्वी जैसी तथा पृथ्वी धृति जैसी सुशोभित है।'

प्रस्तुत श्लोक का यह अभिप्राय है कि राजा की बुद्धि और लक्ष्मी आदि के समान अन्य कुछ नहीं है। यहाँ राज्यश्री बुद्धि की तरह और बुद्धि राज्यश्री की तरह वर्णित है अर्थात् राज्यश्री उपमान, बुद्धि उपमेय अगली बार उपमेय-उपमान के रूप में वर्णित हैं, अतः यहाँ उपमेयोपमा अलङ्कार है।

16. स्मरण

लक्षण :– सदृशानुभवाद्वस्तुस्मृतिः स्मरणमुच्यते।।

(सा०द० X-27)

अर्थात् जहाँ समान रूप अथवा गुण वाली वस्तु के अनुभव से उसके समान अन्य किसी वस्तु की स्मृति हो जाए वहाँ स्मरणालङ्कार होता है।

उदाहरण :

अरविन्दमिदं वीक्ष्य खेलत्खञ्जनमञ्जुलम्।
स्मरामि वदनं तस्याश्चारुचंचललोचनम्।।

(सा०द० X.27 में)

अर्थ : 'इस कमल को देखकर जो पास विचरते हुए खंजन-युगल से सुन्दर लग रहा है उस सुन्दरी के उस मुख का स्मरण हो जाता है जिसमें दोनों चञ्चल नेत्रों की शोभा विद्यमान रहती है।'

प्रस्तुत श्लोक में 'खेलते हुए खञ्जनों से आकर्षक कमल' को देखकर उसके समान 'चंचल नेत्रों से आकर्षक मुख' की स्मृति का वर्णन होने से यहाँ **स्मरण** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

स्माराम्यवन्त्याधिपतेः सुतायाः प्रस्थानकाले स्वजनं स्मरन्त्याः।
वाष्पं प्रवृत्तं नयनान्तलग्नं स्नेहान्ममैवोरसि पातयन्त्याः।।

(स्वप्न० V-5)

यहाँ उज्जैनी का नाम सुनकर वासवदत्ता के प्रस्थान के दृश्य के स्मरण का वर्णन है, अतः यहाँ स्मरण अलङ्कार है।

17. रूपकम्

लक्षण :– रूपकं रूपितारोपो विषये निरपह्नवे।

(सा०द० X-28)

अर्थात् जहाँ निषेध रहित उपमेय पर उपमान के अभेदारोप का वर्णन हो वहाँ रूपक अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

आहवे जगदुद्दण्ड! राजमण्डलराहवे।
श्रीनृसिंहमहीपाल! स्वस्त्यस्तु तव बाहवे।।

(सा०द० X-30 में)

अर्थ : 'हे नृसिंह महीपाल! हे महापराक्रमी महाराज! युद्ध में प्रचण्ड बलशाली राजमण्डल रूपी चन्द्रमा के लिए राहु स्वरूप आप का भुजदण्ड सदा विजयी हो।'

प्रस्तुत श्लोक में 'राजमण्डल' उपमेय पर 'चन्द्रबिम्ब' रूप उपमान के अभेदारोप का तथा 'राजा के बाहुदण्ड' पर 'राहु' के आरोप का वर्णन है, अतः यहाँ रूपक अलङ्कार हैं।

अन्य उदाहरण :

लावण्यमधुभिः पूर्णमास्यमस्या विकस्वरम्।
लोकलोचनरोलम्बकदम्बैः कैर्न पीयते।।

(सा०द० X-32 में)

अर्थ : 'लोगों के कौन ऐसे नेत्र रूपी भ्रमर नहीं हैं जो कि लावण्य रूपी मधु रस से भरे इसके खिले हुए मुख का पान करने के लिए लालची न हों?'

प्रस्तुत श्लोक में 'लावण्य' तथा 'नेत्र' उपमेय हैं तथा 'मधु' और 'भ्रमर' उपमान हैं। उपमेय पर उपमान के अभेदारोप का वर्णन होने से यहाँ रूपक अलङ्कार है।

एक और उदाहरण :

आ जन्मनः शाठ्यमशिक्षितो य-
स्तस्याप्रमाणं वचनं जनस्य।
परातिसन्धानमधीयते यै-
र्विद्येति ते सन्तु किलाप्तवाचः।।

(अभिज्ञान० V-25)

प्रस्तुत श्लोक में 'परातिसन्धान' उपमेय पर 'विद्या' उपमान के आरोप का वर्णन होने से यहाँ रूपक अलङ्कार है।

अभिज्ञान० के इस श्लोक के अतिरिक्त रूपक अलङ्कार के अन्य उदाहरण हैं–IV-18; तथा VII-19.

यद्यपि रूपक के अनेक भेद हैं किन्तु परीक्षा की दृष्टि से छात्र इसके भेदोपभेदों के चक्कर में न पड़ें।

18. सन्देह

लक्षण :–सन्देहः प्रकृतेऽन्यस्य संशयः प्रतिभोत्थितः।।

(सा०द० X-35)

अर्थात् जहाँ उपमेय में उपमान का कविप्रतिभाजनक संशय का वर्णन हो वहाँ सन्देहालङ्कार होता है। चमत्कारपूर्ण संशय ही अलङ्कार कहलाता है–यह ध्यान देने योग्य बात है।

उदाहरण :

किं तारुण्यतरोरियं रसभरोद्भिन्ना नवा वल्लरी
वेलाप्रोच्छलितस्य किं लहरिका लावण्यवारांनिधेः।
उद्गाढोत्कलिकावतां स्वसमयोपन्यासविश्रम्भिणः
किं साक्षादुपदेशयष्टिरथवा देवस्य शृङ्गारिणः।।

(सा०द० X-36 में)

अर्थ : 'क्या यह सुन्दरी है अथवा यह तारुण्य तरु की रसीली नवमञ्जरी है? क्या यह उद्वेजित लावण्य-सागर की लहर है? अथवा प्रेमीजन के लिए उत्कण्ठित प्रेमियों को प्रेम का पाठ पढ़ाने में उत्सुक कामदेव की उपदेश-यष्टि है?'

प्रस्तुत श्लोक में 'कामिनी' उपमेय है तथा 'वल्लरी, लहरिका' आदि उपमान हैं। उपमेय में उपमान का कवि प्रतिभा द्वारा उत्थापित संशय विद्यमान है, अतः यहाँ सन्देह अलङ्कार है।

एक और उदाहरण देखें–

अयं मार्तण्डः किं स खलु तुरगैः सप्तभिरितः
कृशानुः किं सर्वाः प्रसरति दिशो नैष नियतम्।

कृतान्तः किं साक्षान्महिषवहनोऽसाविति पुनः
समालोक्याजौ त्वां विदधति विकल्पान् प्रतिभटाः।।

(सा०द० X-36 में)

अर्थ : 'महाराज! संग्राम में आपको देख-देखकर शत्रु-सैनिक यह सोचते हैं कि क्या यह सूर्य है? सूर्य के तो सात घोड़े होते हैं! क्या यह अग्नि है? अग्नि तो सर्वत्र विचरणशील नहीं होती। तो क्या यह यमराज है? किन्तु यमराज तो महिष वाहन (भैंसे की सवारी करने वाला) होता है?'

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय 'राजा' में 'मार्तण्ड, कुशानु तथा कृतान्त' उपमानों का कविप्रतिभा द्वारा उत्थापित संशय है, अतः यहाँ सन्देह अलङ्कार है।

एक और उदाहरण :

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु
क्लिष्टं नु तावत् फलमेव पुण्यम्।
असन्निवृत्त्यै तदतीतमेते
मनोरथा नाम तटप्रपाताः।।

(अभिज्ञान० VI-10)

प्रस्तुत श्लोक में 'शकुन्तला-मिलन' उपमेय में 'स्वप्न, माया तथा मतिभ्रम' उपमानों का कविप्रतिभा से उत्पन्न संशय विद्यमान है, अतः यहाँ सन्देह अलङ्कार है। अभिज्ञान० के दूसरे अंक के नौवें (II-9) श्लोक में भी सन्देह अलङ्कार है।

19. भ्रान्तिमान्

लक्षण :–साम्यादतस्मिंस्तद्बुद्धिर्भ्रान्तिमान् प्रतिभोत्थितः।।

(सा०द० X-36)

अर्थात् जहाँ सादृश्य के कारण एक वस्तु में दूसरी भिन्न वस्तु का निश्चयात्मक ज्ञान हो तथा वह ज्ञान कविप्रतिभा से उत्पन्न चमत्कारपूर्ण हो वहाँ भ्रान्तिमान अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

मुग्धा दुग्धधिया गवां विदधते कुम्भानधो वल्लवाः
कर्णे कैरवशङ्कया कुवलयं कुर्वन्ति कान्ता अपि।
कर्कन्धूफलमुच्चिनोति शबरी मुक्ताफलशङ्कया
सान्द्रा चन्द्रमसो न कस्य कुरुते चित्तभ्रमं चन्द्रिका।।

(सा०द० X-36 में)

अर्थ : 'देखो! चन्द्रमा की चमकती चांदनी किसके हृदय में भ्रम उत्पन्न नहीं करती? मुग्ध हृदय ग्वाले इसे दूध की धार समझकर गौओं के नीचे घड़े रखने लगते हैं, मुग्ध हृदय रमणियाँ नीलकमल को श्वेत कमल समझकर उन्हें कानों के आभूषण बनाने लगती हैं तथा शबरयुवतियाँ कर्कन्धू (झरबेरी) को मोती समझकर चुनने में लग जाती हैं।'

यहाँ चन्द्रिका में दूध का, कुवलय में कुमुद का तथा बदरीफल में मुक्ताफल का कविप्रतिभा जन्य भ्रम का वर्णन है, अतः यहाँ **भ्रान्तिमान्** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

सुतनु हृदयात् प्रत्यादेशव्यलीकमपैतु ते
किमपि मनसः संमोहो मे तदा बलवानभूत्।
प्रबलतमसामेवंप्रायाः शुभेषु हि वृत्तयः
स्रजमपि शिरस्यन्धः क्षिप्तां धुनोत्यहिशङ्कया।।

(अभिज्ञान० VII-24)

प्रस्तुत श्लोक में पुष्पमाला में अहिशंका का कविप्रतिभोत्थापित भ्रम का वर्णन होने से **भ्रान्तिमान्** अलङ्कार है। अभिज्ञान० के प्रथम अंक के तेईसवें (I-23) श्लोक में भी **भ्रान्तिमान्** अलङ्कार है।

इसके अतिरिक्त नाटक स्वप्न० के पाँचवें अंक का तीसरा (V-3) श्लोक भी **भ्रान्तिमान** अलङ्कार का बहुत सुन्दर उदाहरण है।

20. उल्लेख

लक्षण :– **क्वचिद् भेदाद् ग्रहीतृणां विषयाणां तथा क्वचित्।**
एकस्यानेकधोल्लेखो यः, स उल्लेख उच्यते।।

(सा०द० X-37)

अर्थात् जहाँ ज्ञाता के भेद से या विषय आदि के भेद से एक वस्तु का अनेक प्रकार से वर्णन हो वहाँ **उल्लेख** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

प्रिय इति गोपवधूभिः शिशुरिति वृद्धैरधीश इति देवैः।
नारायण इति भक्तैर्ब्रह्मेत्यग्राहि योगिभिर्देवः।।

(सा०द० X-37 में)

अर्थ : 'भगवान् कृष्ण का दर्शन कर गोपियों ने उनमें प्रियतम का, वृद्ध लोगों ने शिशु का, देवों ने अधीश्वर का, भक्तों ने नारायण का तथा योगियों ने परब्रह्म का दर्शन किया।'

प्रस्तुत श्लोक में श्रीकृष्ण भगवान् का एक होते हुए भी गोपवधू, वृद्ध आदि ज्ञाताओं के भेद से प्रियत्वादि अनेक रूपों में वर्णन है, अतः यहाँ **उल्लेख** अलङ्कार है।

21. अपह्नुति

लक्षण :–**प्रकृतं प्रतिषिध्यान्यस्थापनं स्यादपह्नुतिः।**

(सा०द० X-38)

अर्थात् जहाँ उपमेय का प्रतिषेध करके उपमान की स्थापना की जाए वहाँ **अपह्नुति** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

नेदं नभोमण्डलमम्बुराशिर्नैताश्च ताराः नवफेनभङ्गाः।
नायं शशी कुण्डलितः फणीन्द्रो नाऽसौ कलङ्कः शयितो मुरारिः।।

(सा०द० X-38)

अर्थ : 'यह आकाशमण्डल नहीं यह तो क्षीरसागर है, ये तारागण नहीं, ये तो फेनखण्ड हैं; यह चन्द्रमा नहीं, यह तो कुण्डली बांधे शेषनाग है और यह कलङ्क नहीं यह तो शयन करते हुए भगवान विष्णु हैं।

प्रस्तुत श्लोक में नभोमण्डल, तारे आदि उपमेयों का प्रतिषेध करके क्षीरसागर, नवफेनभङ्ग आदि उपमानों की स्थापना की गई है, अतः यहाँ **अपह्नुति** अलङ्कार है।

22. निश्चय

लक्षण :–अन्यन्निषिध्य प्रकृतस्थापनं निश्चयः पुनः।।

(सा०द० X-39)

अर्थात् जहाँ उपमान का निषेध करके उपमेय की स्थापना की जाए वहाँ **निश्चय** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

वदनमिदं न सरोजं नयने नेन्दीवरे एते।
इह सविधे मुग्धदृशो भ्रमर! मुदा किं परिभ्रमसि।।

(सा०द० X-39 में)

अर्थ : यह मुख है कमल नहीं, ये नयन हैं नीलकमल नहीं। अरे भ्रमर! इस मुग्ध नेत्रों वाली सुन्दरी के पास इतनी प्रसन्नता के साथ क्यों घूम रहा है?

प्रस्तुत श्लोक में 'वदन' और नयन' उपमेय हैं तथा 'सरोज' और 'इन्दीवर' उपमान हैं। उपमानों का निषेध करके उपमेयों की स्थापना होने से यहाँ **निश्चय** अलङ्कार है।

23. उत्प्रेक्षा

लक्षण :–भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।

(सा०द० X-40)

अर्थात् जहाँ प्रकृत की अप्रकृत के रूप में सम्भावना हो वहाँ **उत्प्रेक्षा** अलङ्कार होता है। इसके प्रथमतः दो भेद हैं–वाच्योत्प्रेक्षा तथा प्रतीयमानोत्प्रेक्षा। **वाच्योत्प्रेक्षा** वहाँ होती है जहाँ उत्प्रेक्षावाचक इवादि शब्दों का प्रयोग होता है तथा जहाँ इवादि शब्दों का प्रयोग नहीं होता वहाँ **प्रतीयमानोत्प्रेक्षा** होती है।

उदाहरण :

ऊरुः कुरङ्गकदृशश्चञ्चलचेलाञ्चलो भाति।
सपताकः कनकमयो विजयस्तम्भः स्मरस्येव।।

(सा०द० X. 42 में)

प्रस्तुत श्लोक में 'नायिका का ऊरु' प्रकृत है जिसकी अप्रकृत 'कामदेव का विजय स्तम्भ' के रूप में संभावना की गई है। अतः यहाँ **उत्प्रेक्षा** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः।
गुणा गुणानुवन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव।।

(सा०द० X-43 में)

अर्थ : 'महाराज दिलीप में ज्ञान था और ज्ञान के साथ मौन भी थे। उनमें शक्ति थी और शक्ति के साथ क्षमा भी, उनमें त्याग था और त्याग के साथ आत्मश्लाघा का अभाव भी। ऐसा लगता था मानों उनके प्रत्येक गुण परस्पर निर्विरोध रहते हुए सहोदर जैसे थे।'

प्रस्तुत श्लोक में महाराज दिलीप के गुणों की निर्विरोध तथा सहोदर की भांति रहने की संभावना की गई है, अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

सैषा स्थली यत्र विचिन्वता त्वां भ्रष्टं मया नुपूरमेकमुर्व्याम्।
अदृश्यत त्वच्चरणारविन्दविश्लेषदुःखादिव बद्धमौनम्।।"

(सा०द० X.43 में)

अर्थ : 'यही वह जगह है जहाँ तुम्हें ढूंढ़ते हुए मुझे पृथिवी पर गिरा हुआ तुम्हारा एक ऐसा निःशब्द नुपूर दिखाई पड़ा जो मानो तुम्हारे चरणारविन्द के विरह के दुःख से मूक पड़ा हो।'

प्रस्तुत श्लोक में दुःख रूप गुण की 'बद्धमौनता' के रूप में संभावना की गई है, अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

कृष्णासारे ददच्चक्षुस्त्वयि चाधिज्यकार्मुके।
मृगानुसारिणं साक्षात् पश्यामीव पिनाकिनम्।।

(अभिज्ञान० I-6)

प्रस्तुत श्लोक में प्रकृत-धनुर्धारी राजा दुष्यन्त की, अप्रकृत-शिवजी के रूप में संभावना की गई है। अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के I-8, 18, 29, 33, 34; II-2, 3;

III-1; IV-2, 12, 22; V-15, 23, 31; Vi-4, 21, 25 तथा VII-8 श्लोकों में भी उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। इनके अतिरिक्त नाटक स्वप्न० के चौथे अंक के दूसरे (IV-2) श्लोक में भी उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

24. अतिशयोक्ति

लक्षण :– सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते।
भेदेऽप्यभेदः संबन्धेऽसंबन्धस्तद्विपर्ययौ।
पौर्वापर्यात्ययः कार्यहेत्वोः सा पञ्चधा ततः।।

(सा०द० X-46-47)

अर्थात् अध्यवसाय के सिद्ध होने पर अतिशयोक्ति अलङ्कार होता है। विषय (उपमेय) का निगरण करके विषयी (उपमान) के साथ उसके अभेदज्ञान को अध्यवसाय कहते हैं।

अतिशयोक्ति पाँच प्रकार की होती है :–

1. उपमेय और उपमान में वास्तविक भेद होते हुए भी अभेदवर्णन करना;
2. उपमेय और उपमान में वास्तविक सम्बन्ध रहते हुए भी असम्बन्ध का वर्णन करना;
3. इसी प्रकार उक्त दोनों का विपर्यय अर्थात् दोनों में अभेद होते हुए भेद का वर्णन;
4. दोनों में असम्बन्ध होते हुए सम्बन्ध का वर्णन;
5. कार्य और कारण के भाव-नियम का विपर्यय वर्णन करना।

उदाहरण :

कथमुपरि कलापिनः कलापो विलसति तस्य तलेऽष्टमीन्दुखण्डम्।
कुवलययुगलं ततो विलोलं तिलकुसुमं तदधः प्रवालमस्मात्।।

(सा०द० X-47 में)

अर्थ : 'कैसा आश्चर्य है! ऊपर मयूर कलाप है, उसके नीचे अष्टमी का

चन्द्रमा विराजमान है, उसके नीचे दो चञ्चल नीलकमल चमक रहे हैं, और उसके बाद मूंगे का सौन्दर्य निखर रहा है।'

प्रस्तुत श्लोक में कामिनी के केशपाश, ललाट, नेत्र, नासिका तथा अधरोष्ठ उपमेयों का मयूरकलाप, अष्टमीचन्द्र, नीलकमल, तिलपुष्प तथा विद्रुम उपमानों के स्वरूप में भेद रहते हुए भी अभेद अध्यवसाय हुआ है; अत: यहाँ अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

उदेति पूर्वं कुसुमं ततः फलं
घनोदयः प्राक् तदनन्तरं पयः।
निमित्तनैमित्तिकयोरयं क्रम-
स्तव प्रसादस्य पुरस्तु सम्पदः।।

(अभिज्ञान॰ VII-30)

प्रस्तुत श्लोक में 'महर्षि मारीच के दर्शन बाद में होना' (कारण बाद में) तथा 'अभीष्ट फल की प्राप्ति' (कार्य) पहले हो गया है; इस प्रकार कार्य-कारण के पूर्वापरनियम के विपर्यय के कारण यहाँ अतिशयोक्ति अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान॰ के प्रथम अङ्क का 34; द्वितीय अंक के 6, 9; तीसरे का 17; पांचवें का 12; छठे का 20 तथा सातवें अंक का 13 इन श्लोकों में भी अतिशयोक्ति अलङ्कार है। नाटक स्वप्न॰ के I-13 श्लोक में भी अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

25. तुल्ययोगिता

लक्षण :– **पदार्थानां प्रस्तुतानामन्येषां वा यदा भवेत्।**
एकधर्माभिसंबन्धः स्यात्तदा तुल्ययोगिता।।

(सा॰द॰ X-47-48)

अर्थात् तुल्ययोगिता वह अलङ्कार है जिसमें केवल प्रस्तुत या अप्रस्तुत पदार्थों का एक धर्म के साथ सम्बन्ध कहा गया हो। वह धर्म कहीं गुण रूप होता है और कहीं क्रिया रूप।

उदाहरण :

तदङ्गमार्दवं द्रष्टुः कस्य चित्ते न भासते।
मालतीशशभृल्लेखाकदलीनां कठोरता।।

(सा०द० X-48 में)

अर्थ : 'उस सुन्दरी के अङ्गों की सुकुमारता को देखने से किसके मन में यह नहीं आता कि मालती के पुष्प, चन्द्रमा की कला तथा कदली के किसलय कठोरता से भरे हैं।'

प्रस्तुत श्लोक में मालती, चन्द्रकला तथा केले के कोमल पत्ते–इन अप्रस्तुत पदार्थों का 'कठोरता' गुण रूप धर्म के साथ सम्बन्ध वर्णित है, अतः यहाँ **तुल्ययोगिता** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे।
समुद्ररसना चोर्वी सखी च युवयोरियम्।।

(अभिज्ञान० III-17)

प्रस्तुत श्लोक में शकुन्तला तथा पृथ्वी–दोनों प्रस्तुत पदार्थों का 'प्रतिष्ठा' एक धर्म के साथ सम्बन्ध होने से यहाँ **तुल्ययोगिता** अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के चतुर्थ अङ्क का 2, 11 तथा 13 और छठे अङ्क का 17 श्लोक भी **तुल्ययोगिता** अलङ्कार के उदाहरण हैं।

26. दीपक

लक्षण :– अप्रस्तुतप्रस्तुतयोर्दीपकं तु निगद्यते।
अथ कारकमेकं स्यादनेकासु क्रियासु चेत्।।

(सा०द० X-48-49)

अर्थात् अप्रस्तुत या प्रस्तुत पदार्थों में एक धर्म का सम्बन्ध **दीपक** अलङ्कार होता है तथा अनेक क्रियाओं में जहाँ एक ही कारक हो वह भी **दीपक** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

दूरं समागतवति त्वयि जीवनाथे
भिन्ना मनोभवशरेण तपस्विनी सा।
उत्तिष्ठति स्वपिति वासगृहं त्वदीय-
मायाति याति हसति श्वसिति क्षणेन।।

(सा०द० X-49 में)

अर्थ : 'तुम्हारे जैसे प्रियतम के दूर चले जाने पर काम के बाणों से विद्ध वह बेचारी कभी उठती है, कभी लेटती है, कभी तुम्हारे निवास स्थान पर जाती है, कभी वहाँ से लौटती है, कभी हँसती है और कभी-कभी आह भरा करती है।'

प्रस्तुत श्लोक में विरहिणी नायिका एक-कारक का उठना, सोना, जाना, आना, हंसना आदि अनेक क्रियाओं से संबंध वर्णित है, अतः यहाँ **दीपक** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

नियमयसि विमार्गप्रस्थित्तानात्तदण्डः
प्रशमयसि विवादं कल्पसे रक्षणाय।
अतनुषु विभवेषु ज्ञातयः सन्तु नाम
त्वयि तु परिसमाप्तं बन्धुकृत्यं प्रजानाम्।।

(अभिज्ञान० V-8)

प्रस्तुत श्लोक में नियमयसि, प्रशमयसि तथा कल्पसे-इन तीनों क्रियाओं का कर्त्ता 'त्वम्' अर्थात् 'राजा दुष्यन्त' है, अतः यहाँ **दीपक** अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के सातवें अंक का तीसरा (VII-3) श्लोक भी दीपक अलङ्कार का उदाहरण है।

27. प्रतिवस्तूपमा

लक्षण :- **प्रतिवस्तूपमा सा स्याद्वाक्ययोर्गम्यसाम्ययोः।।**
एकोऽपि धर्मः सामान्यो यत्र निर्दिश्यते पृथक्।

(सा०द० X-49-50)

अर्थात् जहाँ दो वाक्यों में समानता गम्यमान (व्यंग्य) हो, वाच्य न हो तथा दोनों वाक्यों में एक ही साधारण धर्म का भिन्न-भिन्न शब्दों द्वारा निर्देश हो वहाँ **प्रतिवस्तूपमा** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

धन्यासि वैदर्भि! गुणैरुदारैर्यया समाकृष्यत नैषधोऽपि।
इतः स्तुतिः का खलु चन्द्रिकाया यदब्धिमप्युत्तरलीकरोति।।

(सा०द० X-50 में)

अर्थ : 'हे विदर्भकुमारी दमयन्ती! तुम सचमुच धन्य हो क्योंकि तुम्हीं ऐसी हो जिसने अपने महनीय गुणों से महाराज नल का हृदय आकृष्ट कर रखा है। भला इससे बढ़कर चन्द्रिका की क्या स्तुति कि वह समुद्र को भी अपनी ओर चञ्चल बना दिया करती है।'

प्रस्तुत श्लोक में 'समाकर्षण' तथा 'उत्तरलीकरण' (चञ्चल बनाना) एक ही क्रिया के दो भिन्न-भिन्न रूप हैं किन्तु पुनरुक्ति दोष को दूर करने के लिए यहाँ भिन्न-भिन्न शब्दों द्वारा निर्दिष्ट हैं। अतः यहाँ **प्रतिवस्तूपमा** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

(अभिज्ञान० I-20)

प्रस्तुत श्लोक में सामान्य धर्म–'मण्डनम्' का प्रथम तीन चरणों में रम्य, लक्ष्मीविस्तार तथा मनोज्ञ शब्दों से कथन होने से **प्रतिवस्तूपमा** अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान के पञ्चम अंक के बारहवें (V-12) श्लोक में भी **प्रतिवस्तूपमा** अलङ्कार है।

28. दृष्टान्त

लक्षण :–**दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्।।**

(सा०द० X-50)

अर्थात् दो वाक्यों में समान धर्म से युक्त उपमान और उपमेय के बिम्ब-प्रतिबिम्बन को दृष्टान्त अलङ्कार कहते हैं।

उदाहरण :

अविदितगुणापि सत्कविभणितिः कर्णेपु वमति मधुधाराम्।
अनधिगतपरिमलापि हि हरति दृशं मालतीमाला।।

(सा०द० X-50 में)

अर्थ : किसी अच्छे कवि की सूक्ति चाहे उसके गुण अविदित हों फिर भी वह सुनने वाले के कानों में मधुधारा बरसाती है। (इसी प्रकार) मालती की माला चाहे उसकी गन्ध पहचान में आए या न आए, देखने वालों की दृष्टि को अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है।

प्रस्तुत श्लोक में इवादि सादृश्यसूचक शब्दों का प्रयोग नहीं है फिर भी 'मालतीमाता' के साथ 'कवि की सूक्ति' तथा 'सुगन्ध' के साथ 'कविता के गुणों' के सादृश्य की प्रतीति होती है। इस प्रकार यहाँ उपमानोपमेयभाव का प्रतिबिम्बन है। अतः यहाँ दृष्टान्त अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य संभवः।
न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्।।

(अभिज्ञान० I-26)

प्रस्तुत श्लोक में पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध वाक्यों में उपमानोपमेय भाव का प्रतिबिम्बन है, अतः यहाँ दृष्टान्त अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के III-14, 15; VI- 28, 30, 31 VII-22 श्लोकों में भी दृष्टान्त अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

कः कं शक्तो रक्षितुं मृत्युकाले
रज्जुच्छेदे के घटं धारयन्ति।
एवं लोकस्तुल्यधर्मा वनानां
काले काले छिद्यते रुह्यते च।।

(स्वप्न० VI-10)

प्रस्तुत श्लोक के पूर्वार्ध में उपमानोपमेय भाव का प्रतिबिम्बन होने से दृष्टान्त अलङ्कार है।

29. निदर्शना

लक्षण :– सम्भवन् वस्तुसम्बन्धोऽसम्भवन् वापि कुत्रचित्।
यत्र बिम्बानुबिम्बत्वं बोधयेत् सा निदर्शना।।

(सा०द० X-51)

अर्थात् जहाँ वस्तुओं का सम्बन्ध सम्भव (अबाधित) अथवा असम्भव (बाधित) होकर उनके बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव का बोध कराए वहाँ निदर्शना अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

कलयति कुवलयमालाललितं कुटिलः कटाक्षविक्षेपः।
अधरः किसलयलीलामाननमस्याः कलानिधिविलासम्।।

(सा०द० X-51 में)

अर्थ : इस सुन्दरी के कुटिल कटाक्ष नीलकमलों की माला के विलास से युक्त हैं, इसका अधरोष्ठ कोमल पल्लव की लीला धारण किया करता है और इसका मुख चन्द्रमा के विभ्रम विलास से पूर्ण है।

प्रस्तुत श्लोक में नीलकमल, कटाक्ष आदि वस्तुओं का सम्बन्ध बाधित (असम्भव) होकर भी उनके बिम्बप्रतिबिम्ब भाव को बोधित करता है, अतः यहाँ निदर्शना अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपः क्षमं साधयितुं य इच्छति।
ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति।।

(अभिज्ञान० I-18), (सा०द० X-51 में भी)

प्रस्तुत श्लोक में नीलकमल पत्र की धारा से शमीलता को काटने के असंभव कार्य के होने का वर्णन किया गया है। शकुन्तला से तपस्या कराने को

इच्छा तथा नीलकमलपत्र की धार से शमीलता को काटने की इच्छा–इन दोनों इच्छाओं में बिम्बप्रतिबिम्ब भाव होने से यहाँ निदर्शना अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।। (रघुवंशम् I, 2)
(सा०द० X-51 में भी)

प्रस्तुत श्लोक में 'अल्पबुद्धि से सूर्यवंश का वर्णन' तथा 'उडुप (डोंगी) से सागर का संतरण'–दोनों वाक्यार्थों में बिम्बप्रतिबिम्ब भाव होने से यहाँ निदर्शना अलङ्कार है।

अभिज्ञान० के I-17, 18, VI-16 & VII 29, 31 श्लोकों में भी निदर्शना अलङ्कार है।

30. व्यतिरेक

लक्षण :– आधिक्यमुपमेयस्योपमानान्न्यूनताऽथवा।
व्यतिरेकः..............................।।
(सा०द० X-52)

अर्थात् जहाँ उपमेय की उपमान से अधिकता अथवा उपमेय की उपमान से न्यूनता का वर्णन हो वहाँ **व्यतिरेक** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

अकलङ्कं मुखं तस्या न कलङ्की विधुर्यथा।
(सा०द० X-52 में)

अर्थ : 'उस सुन्दरी का निष्कलङ्क मुख कलङ्कयुक्त चन्द्रमा जैसा नहीं है।'

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय 'मुख' की उत्कृष्टता तथा उपमान 'चन्द्र' की हीनता का वर्णन है, अतः यहाँ **व्यतिरेक** अलङ्कार है।

उदाहरण :

यदुत्तिष्ठति वर्णेभ्यो नृपाणां क्षयि तद् धनम्।
तपः षड्भागमक्षय्यं ददत्यारण्यका हि नः।।

(अभिज्ञान० II-13)

प्रस्तुत श्लोक में 'अन्य धन' उपमान की हीनता तथा 'तपस्या के षष्ठांश' उपमेय की उत्कृष्टता का वर्णन है, अतः यहाँ व्यतिरेक अलङ्कार है। अभिज्ञान० के I-24, II-14, III-6, IV-6, & V-8, 22 श्लोकों में भी व्यतिरेक अलङ्कार है।

31. सहोक्ति

लक्षण :– सहार्थस्य बलादेकं यत्र स्याद्वाचकं द्वयोः।
सा सहोक्तिर्मूलभूतातिशयोक्तिर्यदा भवेत्।।

(सा०द० X-53)

अर्थात् जहाँ सह शब्दार्थ के बल से एक शब्द दो अर्थों का वाचक हो वहाँ सहोक्ति अलङ्कार होता है किन्तु इसके मूल में अतिशयोक्ति का होना आवश्यक है।

उदाहरण :

सहाधरदलेनास्या यौवने रागभाक्प्रियः।

(सा०द० X-53 में)

अर्थ : यौवन के आने से इस सुन्दरी के अधरोष्ठ के साथ ही साथ इसका प्रियतम भी रागयुक्त हो गया है।

प्रस्तुत श्लोक में राग पद के दो अर्थ हैं–लाल रंग तथा अनुराग। अधर के पक्ष में 'राग' का अर्थ है 'लालरंग' तथा नायक के पक्ष में इसका अर्थ है 'अनुराग'। दोनों का अभेदाध्यवसाय होने से मूल में अतिशयोक्ति है तथा सह शब्द के अर्थ के बल से एक शब्द से दो अर्थों की अभिव्यक्ति होने से यहाँ सहोक्ति अलङ्कार है।

इस अलङ्कार के उदाहरण में सामान्यतः सह, समम् तथा इसके पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग होता है।

32. विनोक्ति

लक्षण :–विनोक्तिर्यद्विनान्येन नासाध्वन्यदसाधु वा।।

(सा०द० X-55)

अर्थात् जहाँ एक के बिना दूसरी वस्तु की शोभनता अथवा अशोभनता का प्रतिपादन हो वहाँ विनोक्ति अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

निरर्थकं जन्म गतं नलिन्या
　　यया न दृष्टं तुहिनांशुबिम्बम्।
उत्पत्तिरिन्दोरपि निष्फलैव
　　दृष्टा विनिद्रा नलिनी न येन।।

(सा०द० X-55 में)

अर्थ : 'उस कमलिनी का जन्म व्यर्थ गया जिसने शीतल किरणों वाले चन्द्रमा का दर्शन न किया हो और उस चन्द्रमा का आविर्भाव भी निष्फल ही रहा जिसने खिली हुई कमलिनी को नहीं देखा।'

प्रस्तुत श्लोक में एक दूसरे के बिना 'कमलिनी' तथा 'चन्द्रमा' की उत्पत्ति की निरर्थकता का चमत्कारपूर्ण वर्णन है। यद्यपि यहाँ 'बिना' पद का प्रयोग नहीं हुआ है किन्तु 'बिना' पद के प्रयोग के बिना भी 'विना' पद के अर्थ का अभिप्राय विवक्षित है, अत: यहा विनोक्ति अलङ्कार है।

33. समासोक्ति

लक्षण :– समासोक्तिः समैर्यत्र कार्यलिङ्गविशेषणैः।
　　व्यवहारसमारोपः प्रस्तुतेऽन्यस्य वस्तुनः।।

(सा०द० X-56)

अर्थात् जहाँ समान रूप से अन्वित होने वाले कार्य, लिङ्ग तथा विशेषणों से प्रस्तुत पर अप्रस्तुत के व्यवहार का आरोप हो वहाँ समासोक्ति अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

व्याधूय यद्वसनमम्बुजलोचनाया
वक्षोजयोः कनकुम्भविलासभाजोः।
आलिङ्गसि प्रसभमङ्गमशेषमस्या
धन्यस्त्वमेव मलयाचलगन्धवाह!।। (सा०द० X-56 में)

अर्थ : 'अरे मलयानिल! तू धन्य है क्योंकि तू ही ऐसा है जो इस कमलनयनी सुन्दरी के कनक कलश जैसे कुचों से वस्त्र हटाकर इसके अङ्ग प्रत्यङ्ग का हठपूर्वक आलिङ्गन किया करता है।'

प्रस्तुत श्लोक में 'मलयानिल' प्रस्तुत पर 'दृढ़कामुक' अप्रस्तुत के व्यवहार (बलात् आलिङ्गन आदि) का आरोप स्पष्ट है, अतः यहाँ **समासोक्ति** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

असमाप्तिजिगीषस्य स्त्रीचिन्ता का मनस्विनः।
अनाक्रम्य जगत्कृत्स्नं नो सन्ध्यां भजते रविः।।
(सा०द० X-56 में)

अर्थ : 'जिसकी विजयाकांक्षा पूर्ण न हुई हो उस वीर मनस्वी के लिए स्त्री-चिन्ता कैसी? ऐसा कभी नहीं होता कि सूर्य समस्त संसार पर छाए बिना सन्ध्या का संग किया करे।'

प्रस्तुत श्लोक में 'रवि' पुल्लिंग तथा 'सन्ध्या' स्त्रीलिंग हैं। 'रवि' और 'सन्ध्या' पर नायक तथा नायिका के व्यवहार का समारोप है, अतः यहाँ **समासोक्ति** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे।
समुद्ररसना चोर्वी सखी च युवयोरियम्।।
(अभिज्ञान० III-17)

प्रस्तुत श्लोक में पृथ्वी में स्त्रीत्व का आरोप होने से **समासोक्ति** अलङ्कार है। इसके अतिरिक्त अभिज्ञान० में III-4, 14, IV- 2, 3, 9, 12, 13, V-7; VI-13, 20 श्लोकों में भी **समासोक्ति** अलङ्कार है।

34. परिकर

लक्षण :– उक्तैर्विशेषणैः साभिप्रायैः परिकरो मतः।

(सा०द० X-57)

अर्थात् जहाँ प्रयुक्त विशेषण विशेष अभिप्राय का बोध कराएँ वहाँ **परिकर** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

अंगराज! सेनापते! द्रोणोपहासिन! कर्ण! रक्षैनं भीमाद् दुःशासनम्।

(सा०द० X-57 में)

अर्थ : 'अङ्गराज! सेनापते! द्रोणोपहासिन् कर्ण! बचाओ भीम से, अब भीम से दुःशासन को बचाओ।'

प्रस्तुत श्लोक में कर्ण के सेनापतित्व से क्रुद्ध अश्वत्थामा द्वारा कर्ण के लिए प्रयुक्त सभी विशेषण–पद साभिप्राय हैं। इन विशेषणों से कर्ण की अयोग्यता तथा असमर्थता की अभिव्यक्ति होती है, अतः यहाँ **परिकर** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

सन्दष्टकुसुमशयनान्याशुक्लान्तबिसभङ्गसुरभीणि।
गुरुपरितापानि न ते गात्राण्युपचारमर्हन्ति।।

(अभिज्ञान० III-15)

प्रस्तुत श्लोक में अङ्गों के लिए प्रयुक्त सभी विशेषण पद साभिप्राय हैं, अतः यहाँ **परिकर** अलङ्कार है। इसके अतिरिक्त अभिज्ञान० के I-3, 13, II-4, III-15, 16, IV-8, 11 & VII-2 श्लोकों में भी **परिकर** अलङ्कार है।

35. अप्रस्तुतप्रशंसा

लक्षण :– क्वचिद्विशेषः सामान्यात्सामान्यं वा विशेषतः।
कार्यान्निमित्तं कार्यं च हेतोरथ समात्समम्।।
अप्रस्तातप्रस्तुतं चेद् गम्यते पञ्चधा ततः।
अप्रस्तुतप्रशंसा स्याद्..................।।

(सा०द० X-58-59)

अर्थात् जहाँ–

1. अप्रस्तुत सामान्य से प्रस्तुत विशेष की अभिव्यञ्जना हो;
2. अप्रस्तुत विशेष से प्रस्तुत सामान्य की अभिव्यञ्जना हो,
3. अप्रस्तुत कार्य से प्रस्तुत कारण की अभिव्यञ्जना हो,
4. अप्रस्तुत कारण से प्रस्तुत कार्य की अभिव्यञ्जना हो,
5. अप्रस्तुत समान वस्तु से प्रस्तुत समान वस्तु की अभिव्यञ्जना हो–वहाँ पाँच प्रकार का **अप्रस्तुतप्रशंसा** अलङ्कार होता है।

उदहारण :

पादाहतं यदुत्थाय मूर्धानमधिरोहति।
स्वस्थादेवापमानेऽपि देहिनस्तद्वरं रजः।।

(सा०द० X-59 में)

अर्थ : 'अपमानित होकर भी चुप बैठ जाने वाले मनुष्य से तो वह धूल अच्छी है जो कि पैरों तले रौंदी जाने पर भी रौंदने वाले के सिर पर जा बैठती है।'

प्रस्तुत श्लोक में "हम लोगों की अपेक्षा धूल भी अच्छी है"–यह विशेष अर्थ प्रस्तुत है तथा सामान्य रूप अर्थ–"अपमान सहने वाले मनुष्यमात्र की अपेक्षा धूल अच्छी है"–की अभिव्यञ्जना हुई है–अतः यहाँ **अप्रस्तुत प्रशंसा** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

स्त्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम्।
विषमप्यमृतं क्वचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया।।

(सा०द० X-59 में)

अर्थ : 'यदि यह पुष्पमाला प्राण ले लेने वाली है तो मेरी छाती पर लटकती हुई भी मेरे प्राण क्यों नहीं ले लेती। ओह! ईश्वर की भी क्या लीला है कि एक के लिए तो विष भी अमृत हो जाता है और दूसरे के लिए अमृत भी विष बन जाता है।'

प्रस्तुत श्लोक में–'ईश्वर की इच्छा से अहितकर भी कहीं हितकारी बन जाते हैं और हितकर भी कहीं अहित करने लगते हैं'–यह सामान्य प्रस्तुत है, किन्तु 'विष और अमृत' के द्वारा विशेष का अभिधान किया गया है। विशेष से सामान्य व्यंग्य है, अतः यहाँ **अप्रस्तुत प्रशंसा** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य संभवः।
न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्।।

(अभिज्ञान० I-26)

यहाँ विशेष का सामान्य रूप से वर्णन होने से श्लोक के पूर्वार्ध में **अप्रस्तुतप्रशंसा** अलङ्कार है। इसके अतिरिक्त अभिज्ञान० के I-22, 25, 33; III-2, 3, 6; IV-17; V-2, 12, 17, 22, 24, 25, 28; VI-29, 31 & VII-4, 17, 30 श्लोकों में भी **अप्रस्तुत प्रशंसा** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

कातरा येऽप्यशक्ता वा नोत्साहस्तेषु जायते।
प्रायेण हि नरेन्द्रश्रीः सोत्साहैरेव भुज्यते।।

(स्वप्न० VI-7)

प्रस्तुत श्लोक में 'राजाओं की सामान्य प्रशंसा वर्णन' रूप प्रस्तुत विषय कथन से राजा उदयन की स्तुति की गई है, अतः यहाँ **अप्रस्तुतप्रशंसा** अलङ्कार है।

36. अर्थान्तरन्यास

लक्षण :– **सामान्यं वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि।**
कार्यं च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते।।
साधर्म्येणेतरेणार्थान्तरन्यासोऽष्टधा ततः।

(सा०द० X-61-62)

अर्थात् जहाँ साधर्म्य अथवा वैधर्म्य के द्वारा सामान्य का विशेष से, विशेष का सामान्य से; कार्य का कारण से और कारण का कार्य से समर्थन हो वहाँ उक्त आठ प्रकार का **अर्थान्तरन्यास** अलङ्कार होता है। इस प्रकार चार प्रकार साधर्म्य और चार वैधर्म्य के होते हैं।

उदाहरण :

बृहत्सहाय: कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति।
संभूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा।।

(सा०द० X-62 में)

अर्थ : 'बड़े की सहायता से छोटा (व्यक्ति) भी कार्य सिद्ध कर लेता है। बड़ी नदी के साथ मिलकर छोटी पहाड़ी नदी भी समुद्र तक पहुँच जाती है।'

प्रस्तुत श्लोक में पूर्वार्ध में सामान्य कथन है–'बड़े की सहायता से छोटा मनुष्य भी कार्य को पूरा कर लेता है।' उत्तरार्ध में विशेष कथन है–'बड़ी नदी के साथ मिलकर छोटी पहाड़ी नदी भी समुद्र तक पहुँच जाती है।' सामान्य का विशेष से साधर्म्य से समर्थन होने से यहाँ **अर्थान्तरन्यास** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

पृथिवी! स्थिरा भव भुजङ्गम! धारयैनां
त्वं कूर्मराज! तदिदं द्वितयं दधीथा:।
दिक्कुञ्जरा:! कुरुत तत्त्रितये दिधीर्षा-
मार्य: करोति हरकार्मुकमाततज्यम्।।

(सा०द० X-62 में)

अर्थ : 'अरी पृथ्वी! संभल जा, अरे शेषनाग! पृथिवी को संभालो! अरे कूर्मराज! पृथिवी और शेषनाग दोनों को संभालो! अरे दिग्गजगण! इन तीनों को संभालना तुम्हारा काम है। देखो! आर्य श्रीराम शिवजी के धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा रहे हैं।'

प्रस्तुत श्लोक में 'पृथ्वी को सम्हालना' कार्य है तथा 'हरकार्मुक (शिवधनुष) की प्रत्यञ्चा को चढ़ाना' कारण है। कार्य के कारण के द्वारा साधर्म्य से समर्थित होने से यहाँ **अर्थान्तरन्यास** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

तत्साधुकृतसन्धानं प्रतिसंहर सायकम्।
आर्तत्राणाय व: शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि।।

(अभिज्ञान० I-11)

प्रस्तुत श्लोक में 'आपका शस्त्र दु:खियों की रक्षा के लिए है' विशेष कथन है, 'अच्छी प्रकार से चढ़ाए हुए अपने बाण को उतार लीजिए' सामान्य कथन है। सामान्य का विशेष से साधर्म्य से समर्थन होने से यहाँ **अर्थान्तरन्यास** अलङ्कार है। इसके अतिरिक्त अभिज्ञान० I-2, 20, 22; II-1, 2, 16; III-11; IV-3, 16, 18; V-12, 18, 22, 24, 26, 28; Vi-13, 29, 31 & VII-4, 13 & 24 श्लोकों में भी अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

यदि विप्रस्य भगिनी व्यक्तमन्या भविष्यति।
परस्परगता लोके दृश्यते रूपतुल्यता।।

(स्वप्न० VI-14)

प्रस्तुत श्लोक में कार्य का कारण से समर्थन होने से **अर्थान्तरन्यास** अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त स्वप्न० के I-4, 7, 11 & IV-7 श्लोकों में भी **अर्थान्तरन्यास** अलङ्कार है।

37. काव्यलिङ्ग

लक्षण :– हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गं निगद्यते।

(सा०द० X-62)

अर्थात् जहाँ वाक्यार्थ अथवा पदार्थ किसी के हेतु के रूप में उपनिबद्ध हों वहाँ काव्यलिङ्ग अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति सलिले मग्नं तदिन्दीवरं
मेघैरन्तरितः प्रिये! तव मुखच्छायानुकारी शशी।
येऽपि त्वद्गमनानुकारिगतयस्ते राजहंसा गता-
स्त्वत्सादृश्यविनोदमात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते।।

(सा०द० X-62 में)

अर्थ : '(हे जानकि!) तुम्हारे नेत्र कान्ति की तरह कान्ति वाला नीलकमल पानी में डूब गया, तुम्हारे मुख की कान्ति जैसी कान्ति वाला चन्द्रमा मेघों में छुप गया और तुम्हारी विचित्र चाल जैसी चाल वाले राजहंस मानसारोवर पर

चले गए। ओह! ऐसा लगता है जैसे दैव को यह भी क्षम्य नहीं कि मैं तुम्हारे सादृश्य के साथ भी अपना मन बहला सकूँ!'

प्रस्तुत श्लोक में प्रथम तीन चरणों के वाक्यार्थ चौथे चरण के वाक्यार्थ के हेतु के रूप में उपनिबद्ध हैं, अत: यहाँ **काव्यलिङ्ग** अलङ्कार है।

उदाहरण :

त्वद्वाजिराजिनिर्धूतधूलीपटलपङ्किलाम्।
न धत्ते शिरसा गङ्गां भूरिभारभिया हरः।।

(सा०द० X-62 में)

अर्थ : '(हे राजन्!) युद्धक्षेत्र में आपके घोड़ों के द्वारा उड़ाई हुई धूल से पङ्कयुक्त गङ्गा को भारी बोझ के डर से महादेव शिव अपने मस्तक पर धारण नहीं करते।'

प्रस्तुत श्लोक में प्रथम चरण का समस्त एक पद द्वितीय चरण के हेतुरूप में उपनिबद्ध है, अत: यहाँ **काव्यलिङ्ग** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

जन्म यस्य पुरोर्वंशे युक्तरूपमिदं तव।
पुत्रमेवंगुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि।।

(अभिज्ञान० I-12)

प्रस्तुत श्लोक में प्रथम चरण–'पुरु-वंश में उत्पन्न आपके लिये यह उचित है', द्वितीय चरण–'ऐसे ही गुणों से युक्त चक्रवर्ती पुत्र को आप प्राप्त करें'–का कारण है। अत: यहाँ **काव्यलिंग** अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के I-4, 5, 11, 22, 23, 29; II-3, 4, 5, 9, 16, 18; III-3, 7, 8, 14, 15, 16, 22, 24; IV-1, 3, 9, 11, 13, 15, 19, 21,; V-2, 3, 6, 7, 8, 9, 15, 17, 23, 24, 27; VI-4, 10, 24, 25, 29 & VII-8, 10, 12, 16 & 21 श्लोकों में भी **काव्यलिंग** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

परिहरतु भवान् नृपापवादं न परुषमाश्रमवासिषु प्रयोज्यम्।
नगरपरिभवान् विमोक्तुमेते वनमभिगम्य मनस्विनो वसन्ति।।

(स्वप्न० I-5)

प्रस्तुत श्लोक में उत्तरार्ध पूर्वार्द्ध के हेतु के रूप में उपनिबद्ध है, अतः यहाँ काव्यलिंग अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त स्वप्न० के I-9, 12; IV-9; V-2, 8, 12 & VI-11, 14 & 16 श्लोकों में भी काव्यलिंग अलङ्कार है।

38. विभावना

लक्षण :– विभावना विना हेतुं कार्योत्पत्तिर्यदुच्यते।

(सा०द० X-66)

अर्थात् बिना कारण के भी जहाँ कार्य की उत्पत्ति का वर्णन हो वहाँ विभावना अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

अनायासकृशं मध्यमशङ्कतरलं दृशौ।
अभूषणमनोहारि वपुर्वयसि सुभ्रुवः।।

(सा०द० X-66 में)

अर्थ : 'युवावस्था में इस सुन्दरी की कमर बिना श्रम के ही दुबली हो रही है, इसकी आँखें बिना किसी आशंका के ही चञ्चलता से भरी हुई हैं और इसका शरीर बिना आभूषण के ही मनोहर लग रहा है।'

प्रस्तुत श्लोक में आयास, आशङ्का तथा आभूषण रूपी प्रसिद्ध कारणों के अभाव में भी कृशता, तरलता तथा मनोहरता रूपी कार्यों की उत्पत्ति का वर्णन है। अतः यहाँ विभावना अलङ्कार है।

अन्य उदारहण :

इदं किलाव्याजमनोहरं वपु-
स्तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति।
ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया
शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति।।

(अभिज्ञान० I-18)

प्रस्तुत श्लोक में 'व्याज' (कृत्रिम सुन्दरता) रूप कारण के अभाव में भी 'मनोहरता' (सुन्दरता) रूप कार्य की उत्पत्ति का वर्णन है, अतः यहाँ विभावना अलङ्कार है।

इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के I-23; III-6, 23; V-2, 10, 31; Vi-7,. 13 & VII-1 श्लोकों में भी **विभावना** अलङ्कार है।

39. विशेषोक्ति

लक्षण :– सति हेतौ फलाभावे विशेषोक्तिस्तथा द्विधा।

(सा०द० X-67)

अर्थात् जहाँ कारण के रहते हुए भी कार्य के अभाव का वर्णन हो वहाँ **विशेषोक्ति** अलंकार होता है। इसके भी दो प्रकार हैं–उक्तनिमित्ता तथा अनुक्तनिमित्ता।

क्रमश: उदाहरण :

धनिनोऽपि निरुन्मादा युवानोऽपि न चञ्चलाः।
प्रभवोऽप्यप्रमत्तास्ते महामहिमशालिनः।।

(सा०द० X-67 में)

अर्थ : 'वे लोग महामहिमशाली महापुरुष हैं जो धनी होने पर भी अभिमानरहित, युवा होते हुए भी स्थिर बुद्धि वाले तथा प्रभुत्व रखने पर भी अप्रमत्त हुआ करते हैं।'

अन्य उदाहरण :

स एकस्त्रीणि जयति जगन्ति कुसुमायुधः।
हरताऽपि तनुं यस्य शम्भुना न हृतं बलम्।।

(सा०द० X-67 में)

अर्थ : 'वह कामदेव ही ऐसा है जो अकेला होते हुए भी तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करता है क्योंकि तभी तो उसके शरीर का विनाश करने पर भी उसके बल का विनाश भगवान् शङ्कर के द्वारा नहीं हो सका।'

प्रस्तुत श्लोक में 'शरीर का विनाश' रूप कारण के रहते हुए भी 'बल का विनाश' रूप कार्य के अभाव का वर्णन है, अत: यहाँ **विशेषोक्ति** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

उपोढशब्दा न रथाङ्गनेमयः
प्रवर्तमानं न च दृश्यते रजः।
अभूतलस्पर्शतयाऽनिरुद्धत-
स्तवावतीर्णोऽपि रथो न लक्ष्यते।।

(अभिज्ञान० VII-10)

प्रस्तुत श्लोक में 'रथ का उतरना', रूप कारण के रहते हुए भी 'शब्दादि न होना' कार्य का अभाव होने से **विशेषोक्ति** अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के III-6, 23; V-10; VI-4, 7 & VII-12 श्लोकों में भी **विशेषोक्ति** अलङ्कार है।

40. कारणमाला

लक्षण :– परं परं प्रति यदि पूर्वपूर्वस्य हेतुता।
तदा कारणमाला स्यात्।।

(सा०द० X-76)

अर्थात् जहाँ उत्तरोत्तर वस्तु के प्रति पूर्व-पूर्व वर्णित वस्तु कारण के रूप में उपनिबद्ध होती जाए वहाँ **कारणमाला** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

श्रुतं कृतधियां सङ्गाज्जायते विनयः श्रुतात्।
लोकानुरागो विनयान्न किं लोकानुरागतः।।

(सा०द० X-76 में)

अर्थ : 'विद्वान् लोग की संगति से शास्त्रज्ञान मिलता है, शास्त्रज्ञान से विजय की प्राप्ति होती है, विजय से लोगों का प्रेम प्राप्त होता है और जब लोगों का प्रेम प्राप्त हो जाए तो ऐसी कौन सी वस्तु है जो प्राप्त न हो पाए?

प्रस्तुत श्लोक में पूर्व-पूर्व वर्णित 'शास्त्रज्ञान' आदि को उत्तरोत्तर 'विनय' आदि के कारण के रूप में उपनिबद्ध किया गया है, अतः यहाँ **कारणमाला** अलङ्कार है।

41. एकावली

लक्षण :– पूर्वं पूर्वं प्रति विशेषणत्वेन परं परम्।
स्थाप्यतेऽपोह्यते वा चेत् स्यात्तदैकावली द्विधा।।
(सा०द० X-77-78)

अर्थात् जहाँ प्रत्येक उत्तरोत्तर (अमली) बर्ण्य वस्तु का पूर्व-पूर्व वर्णित वस्तु के विशेषण के रूप में स्थापन या अपोहन (रखना या हटाना) वर्णित हो वहाँ एकावली अलङ्कार होता है। स्थापन तथा अपोहन के भेद से एकावली अलङ्कार के दो भेद हैं।

उदाहरण :

न तज्जलं यन्न सुचारुपङ्कजं न पङ्कजं तद्यदलीनषट्पदम्।
न षट्पदोऽसौ न जुगुञ्ज यः कलं न गुञ्जितं तन्न जहार यन्मनः।।
(सा०द० X-78 में)

अर्थ : 'कोई सरोवर ऐसा नहीं था जिसमें सुन्दर कमल न खिले हों, कोई कमल ऐसा नहीं था जिसमें भौंरे न छिपे हों, कोई भौंरा ऐसा न था जो मधुर गुंजार न कर रहा हो, और कोई गुंजार ऐसी न थी जो मन को लुभा न रही हो।'

प्रस्तुत श्लोक में पूर्व-पूर्व वर्णित वस्तु के लिए उत्तरोत्तर वर्ण्य-वस्तु विशेषण के रूप में उपनिबद्ध है, अतः यहाँ एकावली अलङ्कार है।

42. यथासंख्य

लक्षण :– यथासंख्यमनूद्देश उद्दिष्टनां क्रमेण यत्।
(सा०द० X-79)

अर्थात् जहाँ पूर्व प्रतिपादित (पहले कहे हुए) पदार्थों का क्रमशः पुनः कथन हो वहाँ यथासंख्य अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

उन्मीलन्ति नखैर्लुनीहि वहति क्षौमाञ्चलेनावृणु
क्रीडाकाननमाविशन्ति वलयकाणैः समुत्त्रासय।

इत्थं वञ्जुलदक्षिणानिलकुहूकण्ठेषु साङ्केतिक-
व्याहाराः सुभग! त्वदीयविरहे तस्याः सखीनां मिथः।।
(सा०द० X-79 में)

अर्थ : हे सुभग–प्रेमी युवा! तुम्हारे वियोग में व्याकुल उस सुन्दरी की सखियाँ वञ्जुल दक्षिणानिल तथा कोकिल कण्ठ के विषय में इस प्रकार संकेत भाषा में बातचीत करती हैं–एक कहती है, 'खिल रहे हैं' तो दूसरी बोलती है, 'नाखूनों से नोच डालो!' एक कहती है 'बह रही है' तो दूसरी बोलती है–'रेशमी आंचल से ढक दे।' एक कहती है–'क्रीडावन में आ रही है', तो दूसरी कहती है–'कङ्कण की आवाज से डरा कर भगा दे।'

प्रस्तुत श्लोक में वञ्जुल दक्षिणानिल तथा कुहूकण्ठ का क्रमशः उन्मीलन्ति, वहति तथा आविशन्ति–इन तीनों क्रियाओं के साथ कर्तृत्व सम्बन्ध वर्णित है, अतः यहाँ **यथासंख्य** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

दिष्ट्या शकुन्तला साध्वी सदपत्यमिदं भवान्।
श्रद्धा वित्तं विधिश्चेति त्रितयं तत्समागतम्।।
(अभिज्ञान० VII-29)

प्रस्तुत श्लोक में शकुन्तला का श्रद्धा से, पुत्र सर्वदमन का धन से तथा राजा दुष्यन्त का विधि से क्रमशः अन्वय (सम्बन्ध) होने से **यथासंख्य** अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के श्लोक संख्या IV-2 में भी **यथासंख्य** अलङ्कार है।

43. स्वभावोक्ति

लक्षण :– स्वभावोक्तिर्दुरुहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम्।
(सा०द० X-92)

अर्थात् जहाँ दुरुह अर्थात् सूक्ष्म कविजन द्वारा संवेद्य, पदार्थों के स्वरूप अथवा उनकी क्रियाओं का वर्णन हो वहाँ **स्वभावोक्ति** अलङ्कार होता है। सामान्यतः किसी वस्तु के अत्यन्त स्वाभाविक सौन्दर्यपूर्ण वर्णन में **स्वभावोक्ति** अलङ्कार होता है।

उदाहरण :

लाङ्गूलेनाभिहत्य क्षितितलमसकृद्दारयन्नग्रपद्भ्या-
मात्मन्येवावलीय द्रुतमथ गगनं प्रोत्पतन् विक्रमेण।
स्फूर्जद्धूङ्कारघोषः प्रतिदिशमखिलान् द्रावयन्नेष जन्तून्
कोपाविष्टः प्रविष्टः प्रतिवनमरुणोच्छूनचक्षुस्तरक्षुः।।

(सा०द० X-92 में)

अर्थ : 'बार-बार अपनी पूंछ से धरती पर चोट करते और अगले पंजों से उसे बार-बार नोचते खसोटते, अपने शरीर को एक क्षण में सिकोड़ते और सहसा जोर से ऊपर की ओर उछलते, भयङ्कर 'धूँ, धूँ' श्ब्द करते तथा पशुओं को चारों ओर भगाते हुए, क्रोध में चूर, लाल लाल फूली हुई आँखों वाला यह बघेरा जंगल में घुस गया है।'

प्रस्तुत श्लोक में क्रोधपूर्ण बघेरे का स्वभावोक्ति के सौन्दर्य से पूर्ण चित्रण है, अतः यहाँ **स्वभावोक्ति** अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

मुक्तेषु रश्मिषु निरायतपूर्वकाया
निष्कम्पचारमरशिखा निभृतोर्ध्वकर्णाः।
आत्मोद्धतैरपि रजोभिरलङ्घनीया
धावन्त्यमी मृगजवाक्षमयेव रथ्याः।।

(अभिज्ञान० I-8)

प्रस्तुत श्लोक में रथ के घोड़ों की तीव्र गति का स्वाभाविक वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलङ्कार है। इस श्लोक के अतिरिक्त अभिज्ञान० के I-3, 7, 9, 23, II-2, 6; III-6, 10, 22; IV-14; VI-6, 17 & VII-8, 17 & 21 श्लोकों में भी स्वभावोक्ति अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण :

विस्रब्धं हरिणाश्चरन्त्यचकिता देशागतप्रत्ययाद्
वृक्षाः पुष्पफलैः समृद्धविटपाः सर्वे दयारक्षिताः।

भूयिष्ठं कपिलानि गोकुलधनान्यक्षेत्रवत्यो दिशो
निःसन्दिग्धमिदं तपोवनमयं धूमो हि बह्वाश्रयः।।

(स्वप्न० I-12)

प्रस्तुत श्लोक में तपोवन का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण होने से **स्वभावोक्ति** अलङ्कार है।